हउमै (अहम्)
भाग – २

जिस प्रकर **तपेदिक** (tuberculous) शरीर का भयंकर तथा दीर्ध रोग है तथा इस तपेदिक से अन्य अनेक रोग उत्पन्न होते हैं, उसी प्रकार '**अहम्**' भी सब से –

मूल
भयंकर
असाध्स
दीर्घ

मानसिक रोग है।

हउमै दीरध रोगु है दारू भी इसु माहि ।। (पृ. ४६६)

'अहम्' के भ्रम – भुलाव के कारण ही –

अकाल पुरुष **भूल** जाता है

उसकी स्नेहमयी तथा सुखदायी '**गोद**' **म से निकल जाते हैं ।**

नाम के **प्रकाश से वंचित रहते हैं ।**

'हुकम' से **विमुख तथा बेसुर हो जाते हैं ।**

अज्ञानता के **अन्धकार** से जीवन व्यतीत करते हैं ।

त्रिगुणों में निवास हो जाता है ।

'**द्वैत – भाव**' उत्पन्न होता है ।

मैं – मेरी में विचरण करते हैं ।

पाँच वासनाओं की हठीली फौज के गुलाम हो जाते हैं । **पांचों के रंग** में कर्म करते तथा दुख – सुख भोगते हैं । **अनेक मानसिक रोग,** ईर्ष्या, द्वेष, नफरत, वैर, विरोध, रोष – शिकायतें, लड़ाईयाँ मोल लेते हैं ।

अनेक शारीरिक रोग भोगते हैं

कर्म – बद्ध होकर यम के वश हो जाते हैं ।

आवागमन के चक्र में रव्वार होते हैं ।

गुरबाणी में **'अहम्' के 'दीर्घ रोग' का इलाज** यूं दर्शाया गया है –

साध कै संगि मिटै अभिमान।।
साध कै संगि प्रगटै सुगिआनु ।। (पृ. २७१)

मन अंतरि हउमै रोगु है भ्रमि भूले मनमुखउ दुरजना ।।
नानक रोगु गवाइ मिलि सतिगुर साधू सजना ।। (पृ. ३०१)

सबदे हउमै मारीऐ सचै महलि सुखु पाइ ।। (पृ. ४२९)

आस अंदेसे ते निहकेवलु हउमै सबदि जलाइ ।। (पृ. ४६८)

निरमल नामि हउमै मलु धोइ ।।
साची भगति सदा सुखु होइ ।। (पृ. ६६४)

नानक गुरमुखि मिलि रहै हउमै सबदि जलाइ ।। (पृ. ६५३)

गुन गावत तेरी उतरसि मैलु ।।
बिनसि जाइ हउमै बिखु फैलु ।। (पृ. २८९)

गरुडु सबदु मुखि पाइआ हउमै बिखु हरि मारी ।। (पृ. १२६०)

गुर की सेवा सबदु वीचारु
हउमै मारे करणी सारु ।। (पृ. २२३)

सतिगुरू अपणा सदही सेवहि हउमै विचहु जाई रे ।। (पृ. १०४४)

गुरबाणी की उपरोक्त पंक्तियों के अनुसार –

साध संगत
नाम अउखध
हरि जस
सिमरन
गुरप्रसादि
सेवा

द्वारा केवल **'अहम् रोग' का ही इलाज नहीं होता,** बल्कि तन, मन, अन्त – करण

तथा जीव के –

सभी
सर्व
समस्त
असाध्य
दीर्घ
पूर्व कर्मों के

समस्त रोगों का भी नाश हो जाता है ।

'अहम्' के दीर्घ रोग के **मूल कारण** (causes) इस प्रकार होते हैं –

१. परमेश्वर को **भूलना**

२. माया का **'भ्रम'**

३. तुच्छ **'मायिकी कुसंगत'**

४. **उल्टा मायिकी जीवन चक्र**

५. **मैं – मेरी** का अटूट अभ्यास

इस असाध्य रोग की **जाँच** (diagnosis) यूं की जा सकती है –

मन के अनेक **भांति – भांति के मायिकी तुच्छ –**

तरंगों
ख्यालों
भावनाओं
मनोभावों
जोश
निश्चयों

के सामूहिक प्रभाव की –

रंगत
झलक
सुगन्धि
भड़ास

निश्चयों
कर्मों

के **प्रदर्शन से ही 'अहम्' के दीर्घ रोग की जाँच** (diagnosis or analysis) अथवा ज्ञान हो सकता है ।

यह अहम् का 'तत्व' हमारी **अन्तरात्मा** के ताने–बाने में **धंस–कस–रस कर घुल मिल गया है** तथा हमारे **जीवन के हर पक्ष में 'ओत–प्रोत' परिपूर्ण है।**

सच तो यह है कि हम स्वयं ही **'अहम्' का 'स्वरूप' या 'बुत' बन चुके हैं ।**

यदि **'अन्धेरा' अपने–आप, अपने अन्धकार को दूर नहीं कर सकता** तब हम अपनी चतुराईयों या **उक्तियों–युक्तियों से अपने अहम् से 'शरीर' से कमीज उतारने' की भांति छुटकारा नहीं पा सकते,** क्योंकि हमारी चतुराईयों, उक्तियों–युक्तियों के उद्यम में भी **अहम् का ही अंश होगा ।**

जब लगु जानै मुझ ते कछु होइ ।।
तब इस कउ सुखु नाही कोइ ।।
जब इह जानै मै किछु करता ।।
तब लगु गरभ जोनि महि फिरता ।। (पृ. २७८)

समस्त मानसिक रोगों का मूल कारण **'परमेश्वर को भूलना'** अथवा **विमुख होना ही है–**

परमेसर ते भुलियां विआपनि सभे रोग ।।
वेमुख होए राम ते लगनि जनम विजोग ।। (पृ. १३५)

भूलियो मनु माइआ उरझाइओ ।।
जो जो करम कीओ लालच लगि तिह तिह आपु बंधाइओ ।।
(पृ. ७०२)

हउमै करतिआ नह सुखु होइ ।।
मनमति झूठी सचा सोइ ।।
सगल बिगूते भावै दोइ ।।
सो कमावै धुरि लिखिआ होइ ।। (पृ २२२)

मन कहा बिसारिओ राम नामु ।।
तनु बिनसै जम सिउ परै कामु ।। (पृ. ११८६)

यह **अहम्** का दीर्ध रोग केवल **आम जनता** को ही नही लगा हुआ, **बल्कि** धार्मिक एवं तथाकथित आत्मिक श्रेणी वालों को भी **तगड़ा चिपका हुआ है ।**

अन्तर यह है कि **आम जन्ता तो मोटी स्थूल हउमैं तथा माया की शिकार है,** परन्तु धार्मिक श्रेणी वालों की **हउमैं 'सूक्ष्म' होती है ।**

लोहे के मोटे जंजीर तोड़ने तो आसार है, परन्तु दिमागी चतुराईयों,, उक्तियों–युक्तियों तथा फिलोस्फियों के **रेशम की भांति सूक्ष्म फन्दों से छूटना अति कठिन है ।**

हम बड कबि कुलीन हम पंडित हम जोगी संनिआसी ।।
गिआनी गुनी सूर हम दाते इह बुधि कबहि न नासी ।। (पृ. ९७४)

पाठु पड़िओ अरु बेदु बीचारिओ निवलि भुअंगम साधे ।।
पंच जना सिउ संगु न छुटकिओ अधिक अहंबुधि बाधे ।।.... (पृ. ६४१)

पूजा अरचा बंदन डंडउत खटु करमा रतु रहता ।।
हउ हउ करत बंधन महि परिआ नह मिलिऐ इह जुगता ।। (पृ. ६४२)

हम अनेक जन्मों से **'मैं–मेरी' का अटूट अभ्यास** करते आये हैं । इस कारण **अहम् का भूत हमारे सिर** पर **चढ़ा हुआ है ।** इसने अपनी **'हठीली फौज'** द्वारा हमको **'जकड़ कर बाँधा' हुआ है** तथा मायिकी भ्रम में **अपनी मर्जी से –**

भटकन में डालता
झगड़ा करवाता
नचाता
मारता
पीटता
दण्ड देता
यम के वश डालता है ।

इस तरह **अहम् के 'भ्रम – भुलाव'** ने हमारे जीवन को –

पलचि पलचि सगली मुई झूठे घंघै मोहु ।। (पृ. १३३)

ऐसा तैं जगु भरमि लाइआ ।।
कैसे बूझै जब मोहिआ है माइआ ।। (पृ. ९२)

हंउमै अंदरि खड़कु है खडके खड़कि विहाइ ।।
हउमै वडा रोगु है मरि जंमै आवै जाइ।। (पृ. ५९२)

बिनु बूझे सभु दुखु दुखु कमावणा।।
हउमै आवे जाइ भरमि भुलावणा ।। (पृ. ७५२)

दाति जोति सभ सूरति तेरी ।।
बहुतु सिआणप हउमै मेरी ।
बहु करम कमावहि लोभि मोहि विआपे
हउमै कदे न चूकै फेरी ।। (पृ. १२५१)

किझु न बूझे किझु न सूझै दुनीआ गुझी भाहि ।। (पृ. १३७८)

– बना दिया है ।

जब हमारे अहम् का **'गुब्बार' बहुत 'बढ़' जाता है,** तब हम '**अति अंन्हे बोले'(अन्धे बहरे) होकर नीच एवं गलत कर्म करते हैं ।** इसके **परिणाम स्परूप, किसी दीर्ध दुख – क्लेश की शक्ल में, हमारे अहम् को चोट** (shock) **पहुँचती है** तथा हम अनजाने ही **'हे राम'** कह उठते हैं तथा 'ईश्वर' के आगे **नम्र बनकर अरदास एवं प्रार्थना** करते हैं । इस प्रकार हमें, माया की ओर से **नाम मात्र वैराग्य** आता है तथा 'दुख' **हमारे** अहम् वादी मन की **'दवा – दारू' बनता है ।**

दूखु दारू सुखु रोगु भइआ जा सुखु तामि न होई ।।
तूं करता करणा मै नाही जा हउ करी न होई ।। (पृ. ४६९)

इस प्रकार **"हउमै दीरघ रोगु है दारू भी इसु माहि"** का प्रगटाव होता है । परन्तु जब **दुख 'टल' जाता है,** तब कुछ समय पश्चात् हम **'परमेश्वर' को भूल जाते हैं** तथा पुनः उसी **अहम् के अन्धकूप में गिर पड़ते हैं ।**

इस दशा में यदि हम बाणी पढ़ते – सुनते भी हैं तथा सत्संग भी करते हैं, तब उसका प्रभाव **'चिकने घड़े की भांति'** हमारे **'अहम् ग्रस्त मन' के 'ऊपर से**

ही' फिसल जाता है । इस कारण हमारे मन पर शुभ उपदेशों का **नाम मात्र ही प्रभाव पड़ता है ।**

वास्तव में **अहम् का 'बीज'** हमारे मन के **'अन्ध – गुबार' में ही अंकुरित होता है ।** इसलिए **अहम् के 'रोगी' पौधे को आत्मिक 'कलम' (grafting) ही लगायी जा सकती है,** ताकि **अहम् के दुखदायी काँटों वाले पौधे पर** तुच्छ, मायिकी, कड़वे – कुसैले, खट्टे तथा **जहरीले फलों के स्थान पर** मीठे, रसदायक, लाभदायक, 'प्रीत – प्रेम – रस – चाव' के **उत्तम दैवीय फल लग सकें।**

'अहम् के पौधे' को आत्मिक 'कलम' लगानी ही –

"हउमै दीरध रोगु है दारू भी इस माहि"

है तथा यह पूर्णतया **'प्रेम की उलटी खेल है ।**

गुर परसादी जीवतु मरै उलटी होवे मति बदलाहु ।।
नानक मैलु न लगई ना फिरि जोनी पाहु ।। (पृ. ६५१)

तब तो हमारे **अहम्मयी मन को –**

कलम लगाने
उल्टी खेल
मति उत्तम करने
जीवत मरै
अहम् रोग के इलाज

के लिए –

साध संगत
गुरबाणी विचार
सिमरन – अभ्यास – कमाई
गुरप्रसादि

की अति आवश्यकता है ।

इस विषय में गुरबाणी यूँ **मार्गदर्शन एवं प्रेरणा** करती है –

जिचरु इहु मनु लहरी विचि है हउमै बहुतु अहंकारु ।।
सबदै सादु न आवई नामि न लगै पिआरु ।।
सेवा थाइ न पवई तिस की खपि खपि होइ खुआरु ।।

नानक सेवकु सोई आखीऐ जो सिरु धरे उतारि ।।
सतिगुर का भाणा मंनि लए सबदु रखै उर धारि ।। (पृ. १२४७)

मन कह अहंकारि अफारा ।।
दुरगंध अपवित्र अपावन भीतरि जो दीसै सो छारा ।।
जिनि कीआ तिसु सिमरि परानी जीउ प्राण जिनि धारा ।।
जिसहि तिआगि अवर लपटावहि मरि जनमहि मुगध गवारा ।। (पृ. ५३०)

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इस ठाइ ।।
हउमै विचि सेवा न होवई ता मनु बिरथा जाइ ।।
हरि चेत मन मेरे तू गुर का सबदु कमाइ ।।
हुकमु मंनहि ता हरि मिलै ता विचहु हउमै जाइ ।।
हउमै सभु सरीरु है हउमै ओपति होइ ।।
हउमै वडा गुबारु है हउमै विचि बुझि न सकै कोइ ।।
हउमै विचि भगति न होवई हुकमु न बुझिआ जाइ ।।
हउमै विचि जीउ बंधु है नामु न वसै मनि आइ ।।
नानक सतिगुरि मिलिऐ हउमै गई
ता सचु वसिआ मनि आइ ।। (पृ. ५६०)

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि ।।
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि ।।
हउमै किथहु ऊपजै कितु संजमि इह जाइ ।।
हउमै एहो हुकमु है पइऐ किरति फिराहि ।।
हउमै दीरघ रोगु है दारू भी इसु माहि ।।
किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि ।।
नानक कहै सुणहु जनहु इतु संजमि दुख जाहि ।। (पृ. ४६६)

नानक नदरि करे सो पाए ।।
आस अंदेसे ते निहकेवलु हउमै सबदि जलाए ।। (पृ. ४६८)

हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ ।।
भांभीरी के पात परदो बिनु पेखे दूराइओ ।।
भइओ किरपालु सरब को ठाकुरु सगरो दुखु मिटाइओ ।।
कहु नानक हउमै भीति गुरि खोई
तउ दइआरु बीठलो पाइओ ।। (पृ. ६२४)

नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ।। (पृ. १)

नानक लेखै इक गल होरु हउमै झखणा झाख ।। (पृ. ४६७)

अन्त में, यह बात स्पष्ट करने की आवश्यकता है कि **'अहम्' मन की 'रंगत' या 'भावना'**(consciousness) ही है । अहम् को मारने या 'नाश' करने का सवाल नहीं है । **'अहम्' की मैं – मेरी की 'भावना',** परमेश्वर की **'भूल' या 'अनुपस्थिति' का ही नाम है ।** जिस प्रकार **'प्रकाश' की अनुपस्थिति को ही 'अन्धकार'** कहा जाता है ।

इन विचारों से स्पष्ट है कि –

- **'अहम्' का ख्याल परमेश्वर की 'भूल' में से उत्पन्न होता है ।**
- परमेश्वर की **याद अथवा सिमरन द्वारा ही** 'अहम्' का 'आभाव' हो सकता है ।
- 'अहम्' की **'मैं – मेरी' की भावना को बदलने की ही आवश्यकता है।**
- **यह –**

'उलटी होवे मति बदलाहु'
'बुध बदली सिध पाई'
'उलटी खेल प्रिम' की है ।

- 'अहम्' की **दुखदायी गुलामी से छूटकर –** परमेश्वर के **मधुर प्रेम बंधन** में बंधना है ।

उपरोक्त विचारों से स्पष्ट होता है कि **'मति बदलने'** या **'आत्मिक कलम लगाने की उल्टी खेल** (transformation of conciousness) **के लिए –**

१. पवित्र – पावन, जीती – जागती **'साध – संगत'**

२. अटूट **नाम सिमरन – अभ्यास – कमाई**

३. 'गुरप्रसादि' की आवश्यकता है ।

गुरबाणी अनुसार **'साध संगति' की 'कलम'** (grafting) द्वारा हमारे मन का **रूख उलट कर 'आत्म – परायण'** (divine consciousness) हो जाएगा तथा हमारे मन, तन, चित्त, बुद्धि तथा अन्तःकरण धीरे – धीरे बदलते हुए हमें **'मनमुख' से 'गुरमुख' बना देते हैं ।**

परन्तु यह 'उल्टी खेल प्रिम की', 'निराली प्रेम–खेल', 'छू मंत्र' से प्राप्त नहीं हो सकती ।

इस भयानक–

अहम्
घमण्ड
मान
सम्मान
गर्व
दिखावा
अभिमान

रूपी **'दीर्ध रोग' को दूर करने का–**

ख्याल
उद्यम
प्रेरणा
चिंता

तभी पैदा होती है, जब जिज्ञासु को **'प्रेम छू (प्रेम–स्पर्श)** मिलने पर, उसके **रस में 'अहम्' के कारण विध्न पड़ता है ।** क्योंकि नाम–रसिक के लिए यह **रूकावट अथवा विध्न 'मौत' ही होती है ।**

माई मै **मन को मानु न तिआगिओ ।।**
माइआ केमदि जनमु सिराइओ राम भजनि नही लागिओ ।।.....
इह चिंता उपजी घट महि जब गुर चरनन अनुरागिओ ।।
सुफलु जनमु नानक तब हूआ जउ प्रभ जंस महि पागिओ ।। (पृ. १००८)

यह 'आत्मिक उल्टी खेल' **'लम्बी' तथा कठिन अवश्य है,** परन्तु साध संगत तथा गुरू की कृपा द्वारा **सरल हो जाती है ।**

साध कै संगि नही कछु घाल ।।
दरसनु भेंटत होत निहाल ।। (पृ २७२)

गुर परसादि जीवतु मरै उलटी होवै मति बदलाहु ।। (पृ. ६५१)

इस उल्टी **'प्रेम–खेल' के बिना,** हम अहम् के भ्रम–भुलाव में मैं–मेरी की **गुलामी में–**

'नरक घोर का दुआरा'

'पलचि पलचि सगली मुई झूठै घंधै मोहु'

वाला जीवन व्यतीत करके **अमूल्य जीवन को व्यर्थ खो रहे हैं ।**

जब गुरू की बख्शिश द्वारा जीव के **भ्रम का पर्दा उतर जाता है,** तब जीव की आत्मिक अवस्था का गुरबाणी में यूं वर्णन किया गया है ।

पाइआ लालु रतनु मनि पाइआ ।।
तनु सीतलु मनु सीतलु थीआ सतगुर सबदि समाइआ ।।
लाथी भूख त्रिसन सभ लाथी चिंता सगल बिसारी ।।
करु मसतकि गुरि पूरै धरिओ मनु जीतो जगु सारी ।।
त्रिपति अघाइ रहे रिद अंतरि डोलन ते अब चूके ।।
अखुटु खजाना सतिगुरि दीआ तोटि नही रे मूके।।
अचरजु एकु सुनहु रे भाई गुरि ऐसी बूझ बुझाई ।।
लाहि परदा ठाकुरु जउ भेटिओ तउ बिसरी ताति पराई ।।
कहिओ न जाई एहु अचंभउ सो जानै जिनि चाखिआ ।।
कहु नानक सच भए बिगासा
गुरि निधानु रिदै लै राखिआ ।। (पृ २१५)

इस इलाही –

'उलटी खेल'
'पिउंद' (आत्मिक कलम) (grafting)
'मति – बुध बदली'
'अचरज कौतुक'
'जउ क्रिपा गोबिंद भई'

के करिशमों का तथा हउमै वाली अवस्था का **पृथक – पृथक निर्णय** यूं किया जाता है –

'अहम् वाली अवस्था	**'नाम' वाली अवस्था**
माया का अन्ध गुबार	आत्म प्रकाश
माया का सिमरन	हरी का सिमरन
माया का 'भ्रम'	नाम का प्रकाश
मैं – मेरी	तूं – तेरी
माया की गुलामी	इलाही आजादी
'मन' का हुक्म	इलाही हुक्म
अहम् की काल – कोठरी की 'कैद'	आत्मिक आजादी

अनेकता	एकता–
दूजा – भाउ (द्वैत भाव)	आपे – आप
ईश्वर की 'भूल'	ईश्वर की 'याद'
तृष्णा	'सगल त्रिशन बुझ गई'
'तात पराई'	'सगल संग बण आई'
'दूत – दुसट'	'सभ सजनई'
मलिन बुद्धि	विवेक बुद्धि
अहम् की दृढ़ता	नम्रता – 'रिदै गरीबी'
अपनी मनमर्जी	ईश्वरीय रज़ा (भाणा)
दुख – क्लेश	अटल सुख, अविनाशी खेम
चिंता – फिकर	'चिंता सगल बिनासी'
बाहर ढूंढना	'सब किछु घर माहि
'दावै दाझन होत है'	'निरदावै रहै निसंग'
अनेक चिंतन	'एक चिंतन'
'एक बोलु भी खवतो नाही'	'साध संगति सीतलई'
दिमागी ज्ञान	आत्मिक तत् – ज्ञान
घृणा	प्यार
झूठी पातशाही	'काइम सदा सदा पातशाही'
मनमुख	गुरमुख
यम की सजा	'आउ बैठु आदर सुभ देऊ'
जउ लउ पोट उठाई चलिआउ	'पोट डारि गुरु पूरा मिलिआ
तउ लउ डान भरे'	तउ नानक निरभए'
अहम् के गर्व – गुमान का **'गुबार'**	'मन मतवारो नाम रस पीवै'
'झूठु झूठु झूठु झूठु दुनी गुमान'	**'खूबु खूबु खूबु खूबु खूबु तेरो नामु'**

जब पौधे को **'कलम'** लगायी जाती है, तब पौधे में **'जीवन रौं'** (जीवन धारा) तो वही रहती है, परन्तु उस **'जीवन – रौं'** को **नई 'रंगत'** या **'तत्व' चढ़ जाता है ।**

इसी प्रकार नल में पानी तो वही होता है, परन्तु **ठण्डी – गर्म टंकियों (water cooler or geyser) में गुजरता हुआ,** वह पानी **ठण्डा – गर्म** हो जाता है।

इसी प्रकार हमारे मन को **अच्छी या बुरी 'संगति'** द्वारा **'कलम (grafting) लगाने से'** हमारी मति, बुद्धि तथा अन्त:करण के –

तत्
अंश
संगत
विचार
भावना
श्रद्धा
मनोभाव
मर्जी
इच्छाएं
चाव
उमंग
जोश
स्वाद
चतुराईयाँ
उक्तियाँ
युक्तियाँ
कर्म
आदतें
जीवन
भाग्य

सब कुछ पूर्णतया ही 'बदल' जाते हैं ।

इसलिए जब हमारे मन को **इलाही रंगत की कलम (grafting)** चढ़ जाती है, तब हमारा मन **इलाही 'हुक्म' के प्रवाह में 'सुर' होकर –**

'जिउ तू चलाइहि तिव चलह सुआमी'.....।। (पृ. ९१९)

जिउ बुलावहु जिउ नानक दास बोलै ।। (पृ. २९२)

जि करावै सो करणा ।। (पृ. ६२७)

जह बैसालहि तह बैसा गुआमी
जह भेजहि तह जावा ।। (पृ. ९९३)

'जिव तू रखहि तिव रहउ' (पृ. १३९५)

– अनुसार जीवन व्यतीत करता है ।

गुरमति की इस **'उल्टी – खेल'** को गुरबाणी में यूं दर्शाया गया है : –

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि ।। (पृ. १)

अपुसट बात ते भई सीधरी दूत दुसट सजनई ।।
अंधकार महि रतनु प्रगासिओ मलीन बुधि हछनई ।।
जउ किरपा गोबिंद भई ।।
सुख संपति हरि नाम फल पाए सतिगुर मिलई ।।
मोहि किरपन कउ कोइ न जानत सगल भवन प्रगटई ।।
संगि बैठनो कही न पावत हुणि सगल चरण सेवई ।।
आढ आढ कउ फिरत ढूंढते मन सगल त्रिसन बुझि गई ।।
एकु बोलु भी खवतो नाही साधसंगति सीतलई ।।
एक जीह गुण कवन वरवानै अगम अगम अगमई
दासु दास दास को करीअहु जन नानक हरि सरणई ।। (पृ. ४०२)

सो सिखु सखा बंधपु है भाई जि गुर के भाणै विचि आवै ।।
आपणै भाणै जो चलै भाई विछुड़ि चोटा खावै ।। (पृ. ६०१)

एहड़ तेहड़ छडि तूं गुर का सबदु पछाणु ।। (पृ. ६४६)

फरीदा बुरे दा भला करि गुसा मनि न हढाए ।।
देही रोगु न लगई पलै सभु किछु पाइ ।। (पृ. १३८२)

जिस प्रकार मोमबत्ती या दीपक की **मद्धिम सी लो,** सूर्य के तीक्ष्ण प्रकाश के समक्ष **'मात खा जाती है** तथा **'समा' जाती है ।** उसी प्रकार माया के अन्धकार में, जब हमारे अन्तरात्मा में गुरू – कृपा द्वारा **नाम का प्रकाश होता है,** तब हमारा मन इस अलौकिक प्रकाश के **'तेज' से इतना 'चकाचौंध' हो जाता है** और **विस्माद होकर हमारे मुंह** से यह पंक्ति निकलती है –

खूबु खूबु खूबु खूबु खूबु तेरो नामु ।। (पृ. ११३७)

ऐसी विस्मादमयी झलकों का हमारे मन बुद्धि पर ऐसा **अलौकिक प्रभाव** पड़ता है कि जीव **'भावविभोर' होकर कह उठता है –**

देखहु अचरजु भइआ ।।
जिह ठाकुर कउ सुनत अगाधि बोधि सो रिदै गुर दइआ ।। (पृ. ६१२)

दरसन देखत ही सुधि की न सुधि रही
बुधि की न बुधि रही मति मै न मति है ।।
सुरति मै न सुरति अउ धिआन मै न धिआनु रहिओ
गिआन मै न गिआन रहिओ गति मै न गति है ।।
धीरज को धीरजु गरब को गरबु गइओ
रति मै न रति रही पति रति पति है ।
अदभुत परमदभुत बिसमै बिसम
असचरजै असचरज अति अति है ।। (क.भा.गु. २५)

आत्मिक प्रकाश द्वारा जीव को पहली बार यह **अनुभव होता है** कि जिस **'अहम्' का 'गुब्बार'** उसने जन्मों – जन्मों से **'मैं – मेरी' द्वारा पाला, पोसा, प्रफुल्लित किया तथा सुदृढ़ किया था, वह 'अहम्' तो बिल्कुल झूठा, मिथ्या तथा द्वैत भाव ही था ।** ऐसे भ्रम अथवा अज्ञानता पर आधारित ख्याल, निश्चय, कल्पना तथा **'मैं – मेरी' के दावे** सभी **मिथ्या झूठ** तथा **द्वैत भाव ही थे,** जिस कारण उसने अपना अमूल्य जीवन व्यर्थ ही खोया ।

पलचि पलचि सगली मुई झूठै घंघे मोहु । (पृ. १३३)

कुड़ि कूड़ै नेहु लगा विसरिआ करतारु ।। (पृ. ४६८)

इस प्रकार जब तक जीव को अपने अहम् के भ्रम की अज्ञानता अथवा 'द्वैत भाव' का **अनुभव नहीं होता,** तब तक हमारे **अन्तरात्मा** में सच्ची व पवित्र **नम्रता, विनम्रता, गरीबी, 'दास – भावना' उत्पन्न नहीं हो सकती ।**

'सामाजिक' व्यवहार में हम जो नम्रता एवं गरीबी **प्रकट करते हैं,** यह सब **दिखलावा, 'लोक – पचारा', मिथ्या तथा पाखण्ड है ।** गुरबाणी में इस **दिखावटी नम्रता** को यूँ दर्शाया गया है –

सभु को निवै आप कउ पर कउ निवै न कोइ ।।
धरि ताराजू तोलीए निवै सु गउरा होइ ।।
अपराधी दूणा निवै जो हंता मिरगाहि ।।
सीसि निवाइऐ किआ थीऐ जा रिदै कुसुधे जाहि ।। (पृ. ४७०)

हउ विचि सचिआरु कूड़िआरु ।।
हउ विचि पाप पुंन वीचारु ।। (पृ. ४६६)

दूसरी ओर गुरबाणी में पवित्र – पावन **नम्रता – गरीबी** का यूँ वर्णन किया गया है –

हम नही चंगे बुरा नही कोइ ।।
प्रणवति नानकु तारे सोइ ।। (पृ. ७२८)

कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ ।।
जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ ।। (पृ. १३६४)

पैरी पै पारवाक होइ मन बच करम भरम भउ खोई ।।
होइ पंचाइणु पंजि मार बाहरि जांदा रखि सगोई ।
बोल अमोलु साध जन ओइ । (वा.भा.गु. २३/२१)

हउमै गरबु निवारीऐ गुरमुखि रिदै गरीबी आवै ।
गिआन मती घटि चानणा भरम अगिआनु अन्धेरु मिटावै ।।
होइ निमाणा ढहि पवै दरगह माणु निमाणा पावै
रवसमै सोई भावदा रवसमै दा जिसु भाणा भावै ।
भाणा मंनै मंनीऐ अपणा भाणा आपि मनावै ।
दुनीआं विचि पराहुणा दावा छडि रहै ला – दावै ।
साध संगति मिलि हुकमि कमावै । (वा.भा.गु. २९/१३)

हाँ जी –

नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ ।। (पृ. १)

(समाप्त)